रामचरितमानस में कलात्मक प्रस्तुतीकरण

प्रो. मंजुश्री राव

भक्ति युगीन साहित्याकाश के शाश्वत प्रेरणा पुंज, अनन्य भक्त शिरोमणि, कवि कण्ठाभरण, हिन्दी काव्य गगन के मार्तण्ड गोस्वामी तुलसीदास की कालजयी रचना *रामचरितमानस* का मनीषियों द्वारा अविरल मन्थन होता रहा है।

रामजी तिवारी ने अपनी पुस्तक *'गोस्वामी तुलसीदास'* में जो विचार प्रकट किये हैं, वे अन्यथा नहीं हैं–

"ऋषि कल्प गोस्वामी जी के ग्रन्थरत्नों में निहित रसमूलक साहित्य साधना, विलक्षण काव्यप्रतिभा, उदात्ततम काव्यादर्श, आभ्यन्तरिक वृत्तियों की मनोवैज्ञानिक परख, भावानुगामिनी भाषा, कलात्मक संयम, कला की लोकोन्मुखता, समन्वयवादी दृष्टि, लोकमंगल की साधनापरक व्यवस्था, विश्वजनीन करुणा, आचार-प्राण सर्वसुलभ उपासना पद्धति, लोक हृदय की सच्ची पहचान, जड़-चेतन में सामंजस्य, सामाजिक संसक्ति, लोकोपकार की निष्ठा, वैश्विक मानव धर्म की प्रतिष्ठा आदि के कारण कल्पान्त तक उनकी कृतियाँ मानव के विकास पथ में आलोक पुंज प्रदान करती रहेंगी।[1]"

वस्तुतः *रामचरितमानस* एक ऐसे गंभीर मनीषा, प्रखर मेधा, गहन संवेदन-शीलता, सृजनशील कल्पना रखने वाले मर्मज्ञ की कृति है जिसमें सागर जैसी अथाह गहराई है, यही कारण है कि सुष्ठु विद्वत्जन आज भी उस सागर में गोते लगाकर रत्न प्राप्त करने हेतु प्रयासरत हैं।

उन्हीं रत्नों के रत्नहार में एक और मोती गुम्फित करने का प्रयास किया गया है।

रामचरितमानस में कतिपय पद ऐसे हैं जिनके अध्ययन, मनन, चिन्तन से कलात्मक परिदृश्य की संरचना विनिर्मित होती है।

अयोध्या काण्ड का एक उदाहरण प्रस्तुत है[2]–

दो. – हरित मनिन्ह के पत्र फल, पद्मराग के फूल।
रचना देखि विचित्र अति, मनु विरंचि कर भूल।।287।।

चौ. – वेनु हरित मनिमय सब कीन्हें। सरल सपरव परहिं नहिं चीन्हे।।
कनक कलित अहिबेलि बनाई। लखि नहिं परइ सपरन सोहाई।।1।।

चौ. – तेहि के रचि पचि बंध बनाए। बिच बिच मुकुतादाम सुहाए।।
मानिक मरकत कुलिस पिरोजा। चीरि कोरि पचि रचे सरोजा।।2।।

चौ. – किए भृंग बहुरंग विहंगा। गुंजहिं कूजहिं पवन प्रसंगा।।
सुर प्रतिमा खंभन गढ़ि काढ़ी। मंगल द्रव्य लिये सब ठाढ़ी।।3।।
चौकें भाँति अनेक पुराईं। सिंधुर – मनिमय सहज सुहाईं।

दो. – सौरभ पल्लव सुभग सुठि, किए नीलमनि कोरि।
हेम बौर मरकत घवरि, लसत पाटमय डोरि।।288।।

चौ. - रचे रुचिर वर बंदनिवारे। मनहु मनोभव फंद सँवारे।।
मंगल कलस अनेक बनाए। ध्वज पताक पट चँवर सोहाए।।1।।

चौ. - दीप मनोहरमनि मय नाना। जाइ न बरनि बिचित्र बिताना।।
जेहि मंडप दुलहिनि वैदेही। सो वरनै अस मति कबि केही।।2।।

प्रसंग उस समय का है जब राम-सीता का विवाह सुनिश्चित हो चुका है। विवाह मण्डप निर्मितार्थ राज जनक ने गुणवान् कौशलयुक्त कतिपय कलाकारों को बुलवाया है। मण्डप की रचना वर्णन में जिस तरह केले के खम्भे से लेकर मणि-माणिक्य गूंथने और उसकी तैयारी का चित्रण है, एक सहृदय के समक्ष उन सबका प्रत्यक्ष चित्र ही नहीं वरन् अति अलंकृत, देदीप्यमान, अलौकिक विलक्षण कला मण्डप ही प्रत्यक्ष उभर कर आता है :

सर्वप्रथम मण्डप निर्माण हेतु ऐसे कारीगरों को आमन्त्रित किया गया जो इसके निर्माण की कला में पारंगत थे। व्यक्ति विशिष्ट है और प्रसंग अति विशिष्ट। अत: मण्डप का कार्य भी उनके पदसौष्ठवानुरूप होना अनिवार्य है। इसलिए राजा जनक ने कौशलयुक्त कई कारीगरों को बुलवाने हेतु अपने परिचारकों को भेजा। कई प्रकार के कलाकारों द्वारा ही इस कार्य की पूर्णता सम्भव है क्योंकि मण्डप का कार्य बड़ा है और बारात आने के पूर्व निश्चित समय में यह कार्य पूर्ण होना अनिवार्य है। अत: दक्ष कलाकारों द्वारा ब्रह्मदेव की वन्दना करके काय प्रारम्भ किया गया।

मण्डप के सोलह खम्भों में केले के खम्भों को बाँधने का विधान है। विवाह की तिथि की अनिश्चितता के कारण अकृत्रिम केले के खम्भे तब तक सूख जायेंगे, इसलिए स्वर्ण के खम्भे ही कदली स्तम्भों के आकार के बनाये गये। कला कौशल दो प्रकार का होता है। एक में अल्पमूल्य की ही वस्तुओं को ऐसा सुसज्जित करते हैं कि वह अत्यन्त भड़कीला दूर से ही मालूम पड़े। दूसरा यह है कि बाहर से बिल्कुल सादा दिखे, निकट से विचारपूर्वक देखने पर अत्यन्त सूक्ष्म शिल्पकला का तथा उसके बहुमूल्यवत्ता का परिचय मिले। इन शिल्पियों ने दूसरे प्रकार का अवलम्बन किया। ऐसे खम्भे बनाये जो देखने में केले के लगें, पर वस्तुत: सोने के हों। सोलह केले के खम्भों के स्थान पर सोलह कृत्रिम खम्भे बनाये गये। केले में ही विरञ्चि का विस्मृत होना लिखा क्योंकि उसके भीतर की भी रचना केले सी ही थी। सर्वात्मना केला ही ज्ञात होता था।[3]

मण्डप में प्रथमत: खम्भे गाड़े जाते हैं, अनन्तर वह छाया जाता है, खम्भे ही आधार रहते हैं जिन पर वितान आश्रित रहता है। केले का वृक्ष मांगलिक माना गया है और प्रत्येक मांगलिक कार्य में कदली वृक्ष का उपयोग किया जाता है। अत: गुणवान् कलाकारों ने श्री गणेशाय नम: मंगल रचना से कार्य का शुभारम्भ किया। कदली खम्भ पीत वर्ण का होता है और स्वर्ण भी पीत है अत: स्वर्ण के खम्भे निर्मित किये गये। मंडप के चारों कोनों में केले के खम्भे गाड़े जाते हैं अत: निपुण कलाकारों ने चारों कोनों में केला ही दिखे, ऐसे खम्भे बनाये। केले के पत्ते और फल का वर्ण हरा होता है अत: हरित मणियों के पत्ते और फल की रचना की। पुष्प का वर्ण लाल होता है अत: लाल मणि पद्मराग से फूल की रचना की गई। पीला, हरा, लाल रंगों के माध्यम से कदली वृक्ष का निर्माण किया गया। खम्भे रचना करने वालों को भ्रम हो गया कि ये वृक्ष अकृत्रिम है या कृत्रिम! तात्पर्य यह है कि रचनाकार का मन भ्रमित हो गया तथा उसी में मग्न हो गया। समस्त बांस हरी-हरी मणियों के सीधे और गाँठों सहित ऐसे बनाये कि उनको अभिज्ञात करना कठिन था। सुवर्ण से रचित सुन्दर पानों की लता निर्मित की गई जो पत्तों से युक्त होने के कारण पहचानी नहीं जा सकती थी। उस नाग वेलि को रचकर और पच्चीकारी करके बंधन बनाये। जिसके बीच-बीच में मुक्ता की मालायें झालरें अतीव आकर्षक लग रही थी। मण्डप चूंकि

बाँस से छाया जाता है और हरे बाँस ही मांगलिक कार्यों में प्रयुक्त होते हैं इसलिए बाँस सभी हरे मणि से युक्त दर्शाये गये। बाँसों को गाँठों युक्त रक्खा गया अन्यथा वे काष्ठ खण्ड (लाठी) समीकृत हो जाते परन्तु सब हरित मणियों से ही निर्मित किये गये ताकि शोभा एक रस बनी रहे। खम्भों पर बाँस रखकर सुतली या मूंज की रस्सी से बाँधे जाते हैं अतः पानों की लता सोने की बनाई (यहाँ यह ध्यातव्य है कि पके हुए पान पीले होते हैं)। हरित मणियों के पत्र में हरित मणि के बांस पर कनक के खंभों में कनक बेलि चढ़ाई जो सर्प की तरह चढ़ी। इन समस्त वस्तुओं के मिश्रण से जो दिव्य रूप समक्ष आया उसे वास्तव में पहचानना कठिन था। अति परिश्रम से मोतियों की मालायें लटकाने से मण्डप की शोभा द्विगुणित हो उठी। चूँकि बाँस बिना बन्धन के एक स्थान पर टिके नहीं रह सकते इसलिए बंधन इस प्रकार के बाँधे गये कि शोभा में किसी प्रकार का अन्तर न पड़े। कलाकार ने इसलिये उसे भली-भाँति पच्चीकारी करके बनाया। जहाँ-जहाँ बंध बंधे हैं वहाँ दो-दो गांठों (बंधना) के बीच में एक-एक मुक्तादाम लटकाये हैं जो अकृत्रिम हैं। मानिक, मरकत, हीरा, फीरोजा सभी बहुमूल्य रत्न हैं। वर्ण सबका अलग-अलग है। माणिक्य लाल रंग का, पन्ना गहरे हरे रंग का, हीरा श्वेत रंग का एवं फीरोजा हरापन लिये हुए नीले रंग का होता है। इन सभी रत्नों को चीरकर, बीच से दो फांक कर, खोद-खोद कर कोर कर पुष्प रचा गया। यहाँ यह आलेखन समीचीन है कि कमल चार वर्ण के होते हैं लाल, नीले, पीले एवं श्वेत, तदनुसार माणिक मरकत, कुलिस एवं फिरोजा रत्नों का प्रयोग किया गया। कमल निर्मित करने के साथ ही उसके दो स्नेही अर्थात् भ्रमर तथा जल का होना गोस्वामी जी के मस्तिष्क से विस्मृत नहीं हुआ था। अतः कमल पुष्प के साथ कला मनीषियों ने भृंग और नाना प्रकार के जलपक्षियों का निर्माण किया। ये ऐसे विचित्र बने कि इनमें मात्र वायु के संचरण से ही गुंजन तथा कूजन दोनों सुनाई पड़ते थे। कवि का मनोरम हृदय, पूर्ण कल्पनाओं से ओत-प्रोत है उसमें अकृत्रिम वस्तुओं का स्पर्श सह्य नहीं, आज के Electronic युग में असम्बन्ध होते हुये भी Remote वस्तुओं को गति दे सकते हैं परन्तु उस समय कलाकारों द्वारा बनाये गये भृङ्गों एवं पक्षियों का गढ़न इस वैविध्यपूर्ण चतुरता से किया गया कि उनके स्वस्वरार्थ किञ्चित् वायु का संचरण ही पर्याप्त था।

उपरोक्त पूर्ण विवरण मण्डप के ऊपर के भाग का है। अब अधः भाग का वर्णन उल्लेख्य है। रंगों की बारीकियों और अवसर, प्रसंगानुकूल प्रयोग कलाकार के उद्भट ज्ञान को व्यक्त करता है। मण्डप के सौन्दर्य वृद्धि हेतु नाना प्रकार के विभिन्न रंगों के माणिक्य, सुवर्ण, मुक्ता आदि का प्रयोग किया गया परन्तु चौकों में गजमणि ही प्रयुक्त की गई। चौकें तो अनेक निर्मित की गई पर सबमें स्वच्छ धवल मुक्ताओं को ही प्रयोग में लाया गया क्योंकि ये स्वयं शुभ्र और स्वशोभित हैं, उन्हें अन्य माणिक्यों की शोभा वृद्धि हेतु आवश्यकता नहीं पड़ती। नीलम को कोर कर अत्यन्त सुन्दर आम के पत्ते बनाये, सोने की बौर, पन्ना के धौर व गुच्छे रेशम की डोर से बंधे हुये शोभायमान थे। दो-दो पत्तों के मध्य कहीं बौर लगाये गये और कहीं धौर तथा कहीं फल। बंदनवार इतने द्युतिमान्, आकर्षक, कमनीय हैं कि मानव-दृष्टि उसमें फँस जाती है। द्रष्टा अपलक उसके सौन्दर्य का अवलोकन करता है। सौन्दर्य देखकर सभी वशीभूत हो जाते हैं। बौर, धौर, रेशम की डोरी में इसलिए बाँधे गये क्योंकि भारी होने के कारण लटकाये नहीं जा सकते।[4] पल्लव, बौर, धौर और डोरी बनाकर उनके बंदनवार बनाये गये। आम का सौरभ ज्ञात नहीं किस प्रकार विनिर्मित किया गया कि उससे सुगंधि निर्गत हो रही है। कृत्रिम पुष्पों से सुन्दर सुवास का निकलना अति क्लिष्ट कार्य है। अतः सौरभ शब्द से यह भावाभिव्यक्ति की कल्पना गोस्वामी जी ही कर सकते थे। सौरभ शब्द का प्रयोग कई तथ्यातथ्य को आत्मसात् किये हुये हैं, सौरभ शब्द से प्रत्येक पत्ते के साथ आम्रगुच्छ का होना इंगित है। इनकी डंडी पीत वर्ण की होती है। अतः वह कनक की बनाई गई है। बंदनवार पल्लव के होते हैं और पल्लव नीला होता है[5], यही कारण है कि पल्लव नीलमणि द्वारा बनाये गये। पत्तों की संरचना में कलाकारों

को अति श्रम करना पड़ा। अति कौशल्य से ही वे बन सके। बौर पीत वर्ण का है अतः उसे स्वर्ण का बनाया, फलों का धौर नीले रंग का होता है इसलिए वे मरकत मणि द्वारा निर्मित किये गये। मरकत से पन्ना अभीष्ट है। गहरे हरे वर्ण के होने से उनमें श्याम वर्ण की छटा झलकती है। कवि एक सूक्ष्म चितेरे भी थे। उसमें रंगों के ज्ञान की अभूतपूर्व शक्ति भी थी।

खम्भों में देवताओं की मूर्तिया गढ़कर निकाली गई हैं। ये मूर्तियाँ थाली में सब मंगलमय-पदार्थ हरद, दूब, दधि, पल्लव, अक्षत, पान, पूगीफल आदि लिये स्थानक अवस्था में देदीप्यमान हो रही हैं। देवता, मंगल की प्रतिमा है, मंगल से मंगल की उद्‌भावना हो सकती है–

"This is perfect, that is perfect, perfect comes out of perfect. If you take out perfect from the perfect, the remainder will be perect."

केले के खम्भे शुभ है अतः केले के स्तम्भों में मेंहदी गढ़कर मंगलमय देवताओं की मूर्तियां उत्कीर्ण की गयी जो मंगलमय पुष्प लिये खड़ी हैं। ये मंगल द्रव्य कृत्रिम हैं अन्यथा विवाह के सुअवसर तक नूतन नहीं रह पाते। ये मणियों द्वारा इस प्रकार निर्मित किये गये हैं कि उनमें तथा अकृत्रिम में भेद करना दुष्कर है। यहाँ एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी उल्लेखनीय है कि खम्भों में प्रतिमाओं को खड़ा दर्शाया गया है। श्रीरामचन्द्रजी जब मण्डप में आयेंगे उनके स्वागतार्थ सबको खड़े रहना आवश्यक है, यदि ये मूर्तियाँ जीवन्त होती तो खड़ी हो सकती थी। रामचन्द्रजी के आगमन पर खड़े न हो सकने के कारण उनका धर्म जायेगा और लोग यह समझ जायेंगे कि ये कृत्रिम हैं। इसलिए कलाकार ने अवसर की औचित्यता को भाँपते हुए उन्हें खड़ी निर्मित किया ताकि उन पर किसी प्रकार का असौजन्यता का दोषारोपण न हो।[6]

सुन्दर उत्तम श्रेष्ठ बंदनवार बनाये गये। जो अवलोकन से ऐसे जान पड़ते हैं मानो कामदेव ने फंदे सजाये हैं। अगणित मंगल कलश और सुन्दर ध्वज, पताका, पटाम्बर और चंवर बनाये उसमें मनोहर मणियों के अनेक दीप रक्खे गये। शीतल प्रकाश हेतु किसी समय भारत में मणियों से दीपक का कार्य लिया जाता था। बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला के समय ठण्डी रोशनी के जवाहिरात का ज्ञान प्राप्त होता है। मणिदीपक की इसलिए आवश्यकता पड़ती है कि विवाह प्रायः रात्रि के समय होता है।[7] अनेक सुन्दर मणिमय मन को हरने वाले दीपक बनाये गये। उस विचित्र मण्डप का वर्णन वर्णनातीत है।

तदनन्तर मंगल कलश की स्थापना की गई। मंगल कलश वही है जिनमें गणेशादि मंगल देवताओं की स्थापना हो, पल्लव, यव आदि से युक्त हों। प्रत्येक कलश पर एक-एक दीपक रक्खा जाता है। कलश की संख्या भी अधिक है और दीपकों की संख्या भी। ऊपर नीचे मंडप के चारों ओर रक्खे दीये दीपावली का स्मरण करवाते हैं।

ऐसे चित्रमय सुसज्जित मण्डप की कलात्मकता विलक्षण है। कवि का कलामय संसार अनूठा है जिसमें मात्र एक मण्डप की संरचना में मंगलमय समस्त वस्तुयें तथा कदली वृक्ष, पान, विभिन्न प्रकार के विभिन्न रंगों के माणिक्य, मुक्तादाम का ही प्रयोग नहीं है अपितु देवताओं की प्रतिमा, अनेक शुभ प्रतीकों, मंगल कलश के साथ चतुर्दिक दीये का भी वर्णन है। कवि की चेतना यहीं तक नहीं सीमित है अपितु मुक्ताकाश में विचरण करने वाले नाना विहंगों तथा सरोवर-कमल का सान्निध्य भी दिखाया गया है जो अनुपम है। कवि ने अपने चित्रनिमग्न हृदय से उस परिदृश्य का संकेत किया है जहाँ का वातावरण अति मंगल है, जहाँ प्रकृति को भी महत्व मिला है, कवि हृदय की कलात्मक अभिरुचि अप्रतिम है।

संक्षेपतः ऐसा मण्डप बना कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। यही मण्डप की विचित्रता है कि मणिमय मण्डप तैयार किया गया पर अवलोकन में लताद्रुममय प्रतीत होता था।

दूसरा उदाहरण प्रस्तुत है जहाँ प्रकृति का विहंगम दृश्य अति कलात्मकता से *रामचरितमानस* में उल्लिखित है।

वन प्रदेश मुनि बास घनेरे। जनु पुर-नगर-गाउँ-गन-खेरे।
बिपुल, बिचित्र, बिहग-मृग नाना। प्रजा-समाज न जाइ बखाना।
खगहा, करि, हरि, बाघ, बराहा। देखि महिष-वृष-साज सराहा।
बैर बिहाय, चरहिं एक संगा। जहँ-जहँ मनहु सेन चतुरंगा।
झरना झरहिं, मत्त गज गाजहिं। मनहु निसान बिबिध-बिधि बाजहिं।
चक, चकोर, चातक, सुक, पिक-गन। कूजत मंजु मराल, मुदित मन।
अलि-गन गावत, नाचत मोरा। जनु सुराज, मंगल चहुँ ओरा।
बेलि-बिटप-तृन सफल, सफूला। सब समाज मुद-मंगल-मूला।[8]

प्रसंग उस समय का है जब भरतजी रामचन्द्र से मिलन हेतु वन की ओर जाने को उद्यत होते हैं। वे अभी राम के आश्रम में नहीं पहुँचे हैं, परन्तु राम का आश्रम जिस वन में है, उसके निकट पहुँच गये हैं। इतने समीप पहुँचे हैं कि वन और शैल समाज नयनों की परिधि में आ गया है। यहाँ का वन समाज और शैल समाज पृथक्-पृथक् है। इसलिए कलाकार जो इनके विभेद से अवगत था, पहले वन समाज का तत्पश्चात् शैल समाज का वर्णन करने हेतु अभिप्रेरित हुआ।

निषादराज भरत को वन प्रदेश के अनेक मुनियों के आश्रम के बारे में सूचना देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो मोह रूपी राजा को सेना सहित जीतकर ज्ञान रूपी राजा नगर में अकंटक (शत्रुहीन) राज्य कर रहा है जहाँ सुख सम्पत्ति और सुकाल (मनोरम समय) अकाल, दुर्भिक्ष रहित वर्त्तमान है। वन रूपी प्रान्त में जो अनेक मुनियों के आश्रम हैं वही मानो पुर, नगर, गाँव और पुरवों के समूह है। पुर (शहर), नगर (कस्बा), ग्राम और खेर विस्तार के तारतम्य से हैं। कवि हृदय इस तथ्य से भलीभाँति परिचित है कि मुनि लोग प्रजा नहीं हो सकते और न ही एक आश्रम में उतने मुनि रह सकते हैं। जिज्ञासा जागृत होती है–समाधान भी है। वहाँ रंग बिरंगे अनेक जाति के रहने वाले पशु-पक्षी पर स्थित हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि कानन में रहने वाला समाज पशु-पक्षियों का है। वन में रहने वाले पशुओं का मनोरम चित्रण और उनका आपस में समभाव विलक्षण है। गैंडा, हाथी, सिंह, वराह, भैंसे और बैल की साज सज्जा अनुपम है। अर्थात् उनकी शारीरिक बनावट देखते ही बनती है। वे सब स्वभाव से एक दूसरे के बैरी होते हुए भी एक साथ स्वेच्छानुसार जहाँ-तहाँ विचरण कर रहे हैं। ऐसा लगता है मानो यही चतुरंगिनी सेना है। तुलसीदास ने यहाँ विभिन्न मनोवृत्ति और प्रकृति के पशुओं की एक साथ संधि करके जिस सर्वव्यापी राम रस की गंगा में सबको अवगाहित किया है, वह वर्णन अनन्य हैं। कलात्मकता का सर्वोच्च बिन्दु है। आगे कवि हृदय प्रकृति की रमणीयता और उसके रूप वर्णन में विभिन्न झरनों की झरझराहट, नाना प्रकार के पक्षियों का कूजन का दृश्य उपस्थित करता है। कहीं भी अस्वाभाविकता दृष्टिगत नहीं होती। झरना झर रहा है, मत्त हाथी गरजते हैं, मानो अनेक प्रकार के डंके बज रहे हैं। चकवा, चकोर, चातक, शुक, मयूर और हंस प्रसन्न होकर कूंज रहे हैं। जहाँ मंगल प्रसंग होता है, वहाँ ढोल-नगाड़े निनादित किये जाते हैं, वाद्य, गान और नृत्य होता है। प्राकृतिक सुषमा और प्राकृतिक पशु-पक्षियों की ध्वनि से मनोरम वातावरण की मधुर संकल्पना तुलसीदास को उच्च कलाकारों की श्रेणी में उच्चतम स्थान दिलवाने के लिए यथेष्ट है। जिन पक्षियों की ध्वनि का यहाँ वर्णन किया गया है, जो विभिन्न ऋतुओं में कूजते हैं। यहाँ के इस अलौकिक वातावरण में वे आनन्दित है इसलिए प्रसन्नतावश उनका ध्वनि करना स्वाभाविक है।

पक्षियों का कलरव ऐसा प्रतीत होता है मानों वे ताल दे रहे हों एवं वाद्य बजा रहे हों। अतलस्पर्शी तुलसी की काव्य सरिता से जो निःसृत हुआ उसका पान कर निःश्छल भावाभिव्यक्ति के रूप में यही उद्गार सबने समवेत स्वरों में व्यक्त किये। तुलसी का कला विषयक चमत्कार एवं उनकी सर्जना शक्ति, गम्भीर गवेषणा और अथक प्रयास की अतुलनीय उपलब्धि है।

सुराज में चतुर्दिक मंगल हो रहा है इसलिये भौरों के झुण्ड गा रहे हैं और मोर नाच रहे हैं। वहाँ की लतायें और वृक्ष सब फलों और फूलों से भरे हुये हैं। इस प्रकार इस वन के राज्य का सारा समाज आनन्द और मंगल से सिक्त है। एक तथ्य प्रकाश में लाना युक्तियुक्त होगा कि साज, गान, वाद्य की अन्तिम निष्पत्ति नृत्य से ही हो सकती है एतदर्थ कवि ने इंगित किया कि मयूर नृत्य कर रहे हैं। नृत्यकर्त्ता सजधज कर पूर्ण शृंगार सहित रंगमंच पर अपनी कला का प्रदर्शन करता है। पक्षियों में मोर से अधिक अलंकरण किसी में नहीं है। अतः अन्त में वन प्रदेश की शोभा के वर्णन में मयूर के नृत्य का उल्लेख कर सारा समाज मुदित है, प्रसन्न है, एक अलौकिक मुग्धतामय वातावरण की सृष्टि की है।[9]

कवि हृदय ने यह भली-भाँति दर्शा दिया है कि निःसंदेह मनुष्य चेतनामय प्राणी होने के कारण चेतन जगत् के सौन्दर्य का विशेष रसज्ञ होता है परन्तु यह भी दृढ़ सत्य है कि वह जड़ प्रकृति के विविध विलासों पर भी मुग्ध रहता है। पल्लव गुम्फित पुष्प हास, निर्झरों का कलकल नाद, पक्षियों का चहचहाना, सघन और स्निग्ध हरीतिमा आदि उसकी अनुभूतियों को झकझोरती हैं। इन वाह्य दृश्य चित्रण की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अभिव्यक्ति तुलसी के उपरोक्त वर्णित पदों में निरूपित होती है।

रामचरितमानस में कितने ही ऐसे प्रसङ्गों को उद्धृत किया जा सकता है परन्तु महर्षि पतञ्जलि का एक वाक्य 'प्रातिभाद्वा सर्वम्' लिखकर यहीं विराम देना चाहूँगी। जिसका अर्थ है प्रतिभा के कारण जिस अनौपदेशिक ज्ञान का उदय होता है उसके उदय होने पर प्राणी सर्वज्ञ होने की क्षमता प्राप्त कर लेता है और तत्परिणामस्वरूप तीनों काल का द्रष्टा हो जाता है ऐसा ही ज्ञान तुलसी को प्राप्त था। सर्वज्ञ एवं त्रिकालदर्शी व्यक्ति ही इतनी सूक्ष्मता से भूमण्डल में व्याप्त प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों का हृदयग्राही वर्णन कर सकता है।[10]

संदर्भ

1. तिवारी राम जी, *गोस्वामी तुलसीदास,* दिल्ली, 1998, पृ. 140
2. त्रिपाठी विजयानन्द, *श्री गोस्वामी रामचरित मानस,* विजया टीका सहित, मानस राजहंस, बनारस, पृ. 480-481
3. त्रिपाठी विजयानन्द, वही, पृ. 479
4. *वही,* पृ. 480
5. अञ्जनिनंदनशरण, *मानस पीयूष,* अयोध्या काण्ड, पृ. 719 जिस पल्लवाग्र से आम्र कुसुम मंजरी निकलती है उसी में से नये पत्ते नहीं निकलते। ये पत्र कम से कम एक वर्ष पुराने होने पर श्यामवर्ण के होते हैं और श्याम शब्द के लिए नील शब्द का प्रयोग मानस में मिलता है यथा नील पीत जलजाभ सरीरा, तनुधनस्यामा आदि।
6. *वही,* पृ. 714
7. त्रिपाठी, विजयानन्द, *वही,* पृ. 481
8. चतुर्वेदी सीताराम, *तुलसी ग्रन्थावली,* प्रथम खण्ड, संवत् 2031, काशी, 235.1-4, पृ. 432
9. अञ्जनिन्दनशरण, *वही,* पृ. 886
10. त्रिपाठी विजयानन्द, *तुलसीदास और उनका युग,* वाराणसी, 1953, पृ. 380